विष्नोई पंथ के प्रवर्त्तक गुरु जाम्भोजी का सामाजिक चिन्तन एवं मूल्य

डॉ. पुष्पा विश्नोई

सहायक आचार्य (हिन्दी)
राजकीय महाविद्यालय, बावड़ी (जोधपुर)

गुरु जाम्भोजी अपने युग के महान् संत, विचारक, प्रेरक एवं प्रभावशाली समाज–सुधारक थे। विष्नोई पंथ के प्रवर्त्तक गुरु जाम्भोजी का जन्म जोधपुर राज्य के नागौर परगने के पींपासर नामक ग्राम में भाद्रपद कृष्णा 8 संवत् 1508 (1451 ई.) सोमवार की अर्द्धरात्रि में हुआ था।[1] राजस्थान में सर्वप्रथम पंथ स्थापना का श्रेय भी गुरुजी को ही जाता है। गुरु जाम्भोजी मूलतः निर्गुण थे तथा इन्होंने अन्य संतों की भाँति समाज में जागृति फैलाने तथा लोक में चेतना के प्रसार का कार्य किया। इनकी वाणी को 'जम्भवाणी' के नाम जाना जाता है।
गुरु जाम्भोजी ने अपनी वाणी के माध्यम से समाज में प्रचलित विषमताओं को दूर करने का सद्प्रयास किया। ''व्यष्टि के समष्टि रूप को समाज कहा जाता है। मनुष्य की समस्त बाह्य एवं आन्तरिक क्रियाएँ सामाजिक व्यवहार से निर्दिष्ट होती है।[2] यही वह काल है, जहाँ मोक्ष निर्वाण व परलोक साधना के साथ सन्तों की इहलोक के समाज की दशाओं पर दृष्टि गई।[3] जम्भवाणी में व्यक्त विचारों से जाम्भोजी के विराट लक्ष्य का परिचय मिलता है। उनका उद्देश्य था– अज्ञान रूपी अंधकार में भटक रहे समाज को ज्ञान रूपी प्रकाश द्वारा पथ प्रदर्शन करना ताकि व्यक्ति अपने जीवन को सार्थक बना सके। समाज में असत् के स्थान पर सत्, बुराई के स्थान पर अच्छाई, निकृष्ट के स्थान पर उत्कृष्ट की स्थापना करना जम्भवाणी का मूल स्वर है।

गुरु जाम्भोजी ने तत्कालीन रूढ़िग्रस्त, धर्मान्ध, अंधानुकारी, धार्मिक संकीर्णता ग्रस्त तथा वर्ण व्यवस्था पर आधारित जाति निर्धारण समाज को देखा तो उन्हें अत्यधिक निराशा हुई। अतः उन्होंने जीवन पर्यन्त रूग्ण समाज एवं धर्म के नाम पर पाखण्ड का प्रसार करने वालों से लोहा लेते रहे।

वे लोक में जागृति के वाहक बने तथा जाम्भोजी के व्यक्तित्व की तेजस्विता से प्रभावित होकर निम्न वर्ण से लेकर उच्चवर्ण एवं वर्ग तक लोगों ने उनके गुरुत्व को स्वीकार करते हुए उनके शिष्य बन गये। उन्होंने अपने व्यक्तिगत साधना अनुभव तथा लोक में व्याप्त बातों के चिन्तन के आधार पर कुछ सामाजिक मूल्य निर्धारित किये तथा उनका प्रचार किया।
व्यक्ति के आचरण की शुद्धता तथा विश्वसनीय व्यक्ति हेतु सत्य आवश्यक कसौटी है। व्यक्ति ही समाज की आधार इकाई है। सत्य से युक्त आचरण करने वाले व्यक्ति ही एक सत्यनिष्ठ समाज का विकास कर सकते हैं। सभी धर्म एवं नैतिक ग्रंथ सत्य का समर्थन करते हैं। गुरु जाम्भोजी के समय में सामन्ती आतंक तथा धर्म के नाम पर आडम्बर फैलाने वाले सच्चाई के सूर्य को धुंधला कर रहे थे। लोक में भी सत्यनिष्ठा की भावना कमजोर हो रही थी। तद्समय में सच बोलना सबसे बड़ा तप था। गुरु जाम्भोजी ने सत्य बोलने वालों तथा सत्य को आचरण में धारण करने वालों को बल प्रदान करने हेतु कहा कि 'साचा सूं सत भायौ।'[4] समाज को समझाने हेतु गुरु जाम्भोजी ने सत्य का ईश्वर एवं धर्म के साथ तदात्म्य स्थापित किया। भारतीय समाज तथा धर्म का सदैव एकत्व संबंध रहा है। यहाँ धर्म से पृथक समाज की कल्पना नहीं की जा सकती है। जाम्भोजी ने अपनी जम्भवाणी में सत्य के विषय में कहा :–

''सुरपति साच सुरां सूं रंग,
सुरपति साच सुरां सूं मेळो।''[5]

सत्यवादी व्यक्ति के लिए आवश्यक है कि वह अपने वचनों तथा कर्मों के द्वारा जिस वृत्ति की अभिव्यक्ति करता हो, वही उसके अन्तः मन की वृत्ति होनी चाहिए। इससे यह स्पष्ट है कि व्यक्ति के वाणी एवं कार्य में साम्य हो। तभी 'जम्भवाणी' में कथनी एवं करणी (कार्य) में साम्य को आवश्यक बताते हुए गुरु जाम्भोजी ने स्पष्ट शब्दों में कहा है–

¬ क्यूं भलौ ज आप न फरियै, अवरां अफर फराइयै।
¬ क्यूं भलो ज आप न जरियै, अवरां अजर जराइयै।
¬ क्यूं भलो ज आप न मरियै, क्यूं अवरां मारण धाइयै।
पहलू किरिया आप कुमाइयै, तो अवरां नै फुरमाइयै।
जे क्यौंह कीजै मरण पहलू, मत भळकइ मरि जाइयै।[6]

कथ्य एवं कर्म में भिन्नता रखने वाले कभी सत्यानुयायी नहीं हो सकते हैं। अतः वे कहते हैं कि व्यक्ति को कहने से पूर्व कर्मों को अपने अन्तःकरण एवं आचरण में उतारना आवश्यक है।

गुरु जाम्भोजी का विश्वास है कि जिसके हृदय में सत्य–अधिष्ठित है, उसी में परमतत्व का वास है। व्यक्ति के लिए सत्य की कमाई ही श्रेयस्कर है। हक तथा सच्चाई के आधार पर ही ईश्वर की समीपता प्राप्त करना सुगम है। व्यक्ति द्वारा अपनी मर्यादा सीमा में रहकर, अन्य के हितों का अतिक्रमण नहीं करते हुए परिश्रम द्वारा अर्जित धन ही सच्चा धन है क्योंकि वह सत्य मार्ग के माध्यम से प्राप्त किया हुआ है।

'हक हलालूं, हक साच कृष्णों, सुकृत अहल्यो न जाई।'[7]

व्यक्ति को न्याय की प्राप्ति तभी हो सकती है, जब शासक एवं जनता दोनों ही सत्यानुयायी हो।

'जो आराध्यो राव युधिष्ठिर, सो आराधो रे भाई।'[8]

गुरु जाम्भोजी का मानना है कि सामाजिक बुराइयों एवं विद्रूपताओं को नष्ट करने हेतु सत्य की प्रतिष्ठा आवश्यक है। समाज में सद्भावना एवं समानता की स्थापना करने हेतु सच्चाई प्राथमिक सीढ़ी है। लोक को सत्य के प्रति जागृत करते हुए उन्होंने बहुत सटीक उदाहरण देते हुए कहा –

'सांच सिदक सैतांन चुकावौ, ज्यौं तिस चुकावै पांणी।'[9]

जिस प्रकार पानी प्यास को मिटाता है, वैसे ही सत्य एवं निश्छलता से दुष्ट वृत्तियाँ समाप्त हो जाती है। पानी व्यक्ति को प्यास से मुक्त करता है, वैसे ही सत्य समाज को बुराइयों से विहीन बना देता है। मनुष्य सत्यानुकरण द्वारा शुभ कार्यों को सम्पादित कर सकता है। शुभ कार्य स्वस्थ समाज के निर्माण में महत्वपूर्ण होते हैं। गुरु जाम्भोजी के अनुसार व्यक्ति के हृदय तथा कार्य में सर्वत्र एकता होनी चाहिए। व्यक्ति अपने शुभ कर्मों को ही कलमा (प्रार्थना) समझे तथा सात्विक आचरण को कुरान की आज्ञा की भाँति स्वीकार करे। सत्कार्य ही धर्म का मूल तत्व है।[10]

जाम्भोजी के समय मध्यकालीन समाज में व्याप्त सामाजिक विद्वेष तथा जातिगत विषमता के कारण समाज में हिंसा, विषमता तथा घृणा का साम्राज्य था। अन्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था से तथाकथित शूद्रों के साथ पशुवत–व्यवहार होता था, जिसको उन्होंने देखा। पुष्प समान कोमल हृदय वाले गुरु जाम्भोजी को इस सामाजिक दुर्दशा से हार्दिक क्लेश हुआ तथा उन्होंने मानव के मध्य विभेद एवं घृणा को मिटाकर समता के प्रचार करने का स्तुत्य प्रयास किया। पोथी पढ़ने वाले पंडितों की संकुचित भावना का तिरस्कार एवं विरोध किया तथा कहा कि पुस्तकें पढ़ने मात्र से कोई विद्वान, पंडित नहीं हो जाता है, सच्चा ज्ञानी तो वही है जिसने इन ग्रंथों के मूल तत्व को समझ लिया हो। पुस्तकों में निहित सार बात को अंगीकार कर लिया हो। वही गुणवान, पंडित है वरन् ये पुस्तकीय ज्ञान थोथा (निरर्थक) है, बस लोग शब्दों की पुनरावृत्ति करते हुए पिष्टपेषण मात्र में ही तल्लीन रहते हैं।

'पढि कागळ वेदों सासतर सबदों,
पढि गुणि रहिया कछू न लहिया।
निगुरा उमंग्या काठ पषाणौं।
कागल पोथा नां कुछि थोथा नां कुछि गा'या गीयौं।'[11]

गुरु जाम्भोजी ने स्वार्थ को त्याज्य माना तथा दीन के प्रति करूणा के भाव की व्यापक प्रतिष्ठा की । उनके अनुसार समस्त संसार आकर्षणों से परिपूर्ण है, सभी लोग बाह्य मोहक उपदानों के प्रति आकर्षित होते रहते हैं। समाज के लोग लुभावनी किन्तु निरर्थक वस्तुओं में ही उलझे रहते हैं। दुनियादारी के स्वार्थों के वशीभूत होकर व्यक्ति अपने को ही ठगता है। सच्चा मानव वही है जो गरीब (दीन) की सहायता करे, क्योंकि परमार्थ ही मानवतावादी धर्म की पहचान है।

'दुनिया राचै गाजै वाजै, तांह मां कंणौं न दांणौं।
दुनियां के रंगि सोह कोई राचै, दीन रचै सो जांणौं।
लोही मास विकारो होयसी, मुरिखो फिरै अयांणौं।
मागरमणियां काच कथीर न राचौ कूड़ दुनी डफांणौं।'[12]

मनुष्य को सदैव परोपकार वृत्ति को अपनाना चाहिए। जिससे समाज के समस्त लोगों का कल्याण हो सके। व्यक्ति परोपकार का पालन कर संसार सागर से भी पार उतर सकता है। दूसरों की भलाई द्वारा व्यक्ति तथा समाज का उद्धार संभव है।

'पार गिराये जीव तिरै।
पार गिराये सने ही करणी।

'[13]गुरु जाम्भोजी के अनुसार जीव, वनस्पति सभी उसी परमात्मा की कृति है। अतः सभी परस्पर संबंधी है। जम्भवाणी में धर्म के नाम पर हिंसा करने वालों को कटु शब्दों में चेतावनी दी है।

'आप खुदायबंद लेखो मांगै,
रे बिनही गुन्हैं जीव क्यूं मारो,
थे तक जाणों तकपीड़ न जाणों।'[14]

गुरु जाम्भोजी ने अपनी वाणी में हिंसा को निंदनीय एवं घृणित बताया है। हिंसक लोगों को सावधान करते हुए कहा है –

'जीवां ऊपर जोर करीजै, अंतकाल होयसी भारुं।'[15]

मानवीय समाज, प्राकृतिक जैविक चक्र हेतु सभी प्राणियों एवं वनस्पति का संतुलित होना आवश्यक है। वैज्ञानिक भी इस तथ्य की पुष्टि कर चुके हैं। इसी पहलू पर समाज को चिन्तन हेतु प्रेरित करने वाले महान् पर्यावरण विद् गुरु जाम्भोजी ही थे। उन्होंने करीब 525 पूर्व विश्नोई पंथ की स्थापना के साथ समाज को प्राणी मात्र के प्रति मानवीय मूल्य युक्त दृष्टिकोण प्रदान किया। जाम्भोजी के सामाजिक चिन्तन एवं मूल्य के आयाम अत्यंत व्यापक रहे हैं।
धर्म के नाम पर अपना स्वार्थ सिद्ध करने वालों ने वेद तथा कुरान के नाम पर पाखण्ड का जाल फैला रखा है। ऐसे दुष्टों के भ्रमाने से कुछ लोग भ्रमित हो जाते हैं तथा उनके बहकावे में आकर मानवता का अहित करते हैं।

'वेद कुरांण कुमाया जाळूं,
भूला जीव कुजीव कुजांणी।'[16]

'जम्भवाणी' में अल्लाह एवं ईश्वर को एक ही माना है। उन्होंने समाज में समन्वय का सूत्रपात करते हुए कहा –

'अलाह अलेख अडाळ अजूंनी सिंभू।'[17]

जाम्भोजी ने जिस मूल्य को सर्वाधिक महत्वपूर्ण समझा वह था – मानव–मानव की समता। मानव ने किसी भी जाति में जन्म लिया हो, वह किसी भी धर्म या मत से संबंधित हो लेकिन वह मानवीय दृष्टि से समता का अधिकारी है। इतना ही नहीं अर्थ, प्रतिष्ठा, पद, कुल एवं लिंग आदि किसी भी आधार को, उन्होंने मानव–मानव में भेद का कारण नहीं माना। उनका मानना था कि जिसके कार्य हीन एवं निम्न कोटि के हैं वे अवश्य समता के अधिकारी नहीं हैं जो व्यक्ति निर्दयी, करूणा हीन, दूसरों का शोषण कर अपना भरण–पोषण करने वाले हैं, वे अवश्य राक्षसवृत्ति एवं दुष्ट प्रवृत्ति वाले हैं, उन्हें ही निम्न (नीच) समझना चाहिए।

'जांका जळंम नहीं परि क्रंम चंडाळू।
और कूं जिबह करि आप कूं पोषणां।'[18]

जम्भवाणी ने तथा–कथित निम्न–जाति एवं वर्ण के लोगों को उत्तम कर्म करने का संदेश देकर हीन–ग्रन्थियों से मुक्त कर, इन साधारण लोगों में समाज के अविभाज्य अंग के रूप में प्रतिष्ठित किया। अपने को शिष्ट समझने वाले जन–मानस को कर्म की महत्ता से अवगत कराया ताकि सभी इस चेतना को अपनाने में प्रयत्नशील भी हो।
गृहस्थ जीवन का महत्व 'जम्भवाणी' में प्रतिपादित महत्वपूर्ण सामाजिक मूल्य है। उन्होंने उस युग के अकर्मण्य साधु एवं मात्र वेश सन्यासियों की तरह धारण करने वाले को स्पष्ट शब्दों में कहा कि योग, धर्म आदि का मूल उद्देश्य तो मालूम तक नहीं फिर परिवार आदि का त्याग करके कौनसी उपलब्धि प्राप्त कर ली।[19] जाम्भोजी ने अपनी वाणी द्वारा समाज में नारी को उचित स्थान की अधिकारिणी बताते हुए, ग्रहस्थ जीवन की प्रतिष्ठा कर समाज की विशृंखलित, वृत्तियों को संयमित करने का प्रयास किया। 'जम्भवाणी' सामान्य गृहस्थ जीवन यापन करते हुए इहलोक एवं परलोक सुधारने का मार्ग बताती है। जाम्भोजी ने अपनी स्वानुभूति पर आधारित यर्थाथवादी सत्य के आधार पर अपनी दृष्टि को विकसित किया है। उन्होंने इस संसार से पलायन करने की प्रेरणा नहीं दी है। सम्पूर्ण लोक–मानस को अपनी दृष्टि का केन्द्र बिन्दु स्वीकार किया है इसलिए उनकी वाणी में लोक–समाज की भावना अन्तनिर्हित है।[20] जाम्भोजी ने मानव को मानव के रूप में प्रतिष्ठित करने का स्तुत्य कार्य किया। जाम्भोजी ने युगों से अपने अस्तित्व हेतु संघर्षरत नारी को मानवी के रूप में प्रतिष्ठित किया, उनका मानना था कि नारी को मात्र लिंग के रूप में न देखकर मानव के रूप में देखा जाए। नारी में पुरुष की भांति श्वास चलता है दोनों का एक समान शरीर है, वैसी ही जीवात्मा है, फिर उनके मध्य भेद व्यर्थ है।[21]
जम्भवाणी के केन्द्र में लोक कल्याण ही है। लोक की परिधि में ही सम्पूर्ण जनसाधारण समाहित है। इसमें आध्यात्मिकता तो है ही लेकिन लोक व समाज की चिन्ता भी है, जिस हेतु वे इस संसार में प्रकट हुए।
व्यक्तित्व के विकास, विश्वसनीयता एवं सुदृढ़ समाज के लिए व्यक्ति का आचरण एकनिष्ठ होना जरूरी है। दुविधावृत्ति के कारण स्थिरता एवं निर्णायक क्षमता विकसित नहीं पाती है। अतः दुविधावृत्ति का परित्याग आवश्यक हैं।

'जंपो विसन न दोय दिल करणी।'[22]

काम, क्रोध दुविधा एवं निंदा का परित्याग आवश्यक है। निंदा का निषेध करते हुए कहा है –

'जंपो विसन न निंद्या करणी।'[23]

निम्न प्रवृत्ति के कार्य समाज की उन्नति का मार्ग अवरूद्ध करते हैं। क्रोध, असत्य, मिथ्याहंकार आदि को समाप्त करने के लिए मनुष्य का मानसिक परिष्कार आवश्यक है। मनुष्य के तन से ज्यादा आवश्यक है कि उसका मन निर्मल हो तथा आचरण संयमित हो।

'तन मन धोइये संजम हुइये।'[24]

जाम्भोजी ने अनुभव कर लिया था कि समस्त सामाजिक बुराइयों के मूल में व्यक्ति का घमण्ड है। अतः समाज का कल्याण करना है तो वैयक्तिक स्तर से लेकर सामाजिक स्तर तक अहंकार का उन्मूलन करना होगा।

'जां जां घमण्डै स घमण्डू, ताकैं तावन छायों।'[25]

जाम्भोजी ने समाज को जरूरतमंदों की सहायता हेतु भी प्रेरित किया। सभी के समान विकास हेतु सहयोग सदैव अपेक्षित है। व्यक्ति को अपनी कमाई का दसवाँ हिस्सा दान में देना चाहिए। वे कहते हैं रानी तारादेवी, रोहिताश्व और राजा हरिश्चंद्र ने आत्म कल्याण हेतु दान दिया तथा वे जग में आदर्श बन गये।

'तारादे रोहितास हरीचंद काया दसवंध दीयो।'[26]

'जम्भवाणी' के अनुसार दान सदैव पात्र व्यक्ति को ही दिया जाना चाहिए। कुपात्र को दिया हुआ व्यर्थ है, क्योंकि उस धन का उपयोग अनिष्ट कार्यों में होना संभव है। कुपात्र के दिये दान में तथा चोरी से धन हरण किये जाने में कोई भेद नहीं है। अतः दान सदैव सुपात्र अथवा जरूरतमंद को ही दिया जाना उपयुक्त है।

'कुपातां नै दांन ज दीयौ,
जांणै रैण अंधारी चोरै लीयौ।
चोर ज ले करि भाखर चड़िया।'[27]

'जम्भवाणी' 'सादा जीवन उच्च विचार' का मार्ग समाज के समक्ष प्रस्तुत करती है। समाज को कथनी एवं करनी के साम्य का पाठ पढ़ाने वाले गुरु जाम्भोजी ने सदैव सादगी का अनुकरण किया तथा समाज को भी सहजता एवं सादगी का संदेश दिया। वे अलौकिक शक्तियों से परिपूर्ण थे तथा उनका लौकिक संबंध भी आर्थिक रूप से समृद्ध परिवार से था। उसके बावजूद उन्होंने अपना निवास एक रेतीले टीले को बनाया तथा वहाँ स्थित हरी कंकहड़ी वृक्ष की छाँव को महल सदृश्य माना।

'हरी कंकहड़ी मंडप मैड़ी।
जहां हमारा वासा।'[28]

जम्भवाणी की सबसे बड़ी विशेषता यही है, कि जो उन्होंने अनुभूत नहीं किया, उसे जीवन में आचरित नहीं किया, इसीलिए उन्होंने कभी उपदेश नहीं दिया, मात्र संदेश दिया है – अपने आचरणपरक जीवन के माध्यम से, यही कारण है कि उनकी वाणी और संदेश, अमर है – उनके ही जीवन की तरह। जम्भवाणी में सामाजिक चिन्तन एवं मूल्य व्यापक फलक पर प्रकट हुए है। उन्होंने समाज के सूक्ष्म से सूक्ष्म तथ्य को छुआ है। जाम्भोजी अपने युग के महान् सामाजिक चिन्तक एवं मूल्य स्थापक थे।

सन्दर्भ

1. 1. (क) रिपोर्ट मर्दुमषुमारी राजमारवाड़ 1891 ई. :– रायबहादुर मुन्षी हरदयालसिंह, पृ. 93,
2. (ख) महन्त सुरजनदासजी :– श्री जाम्भोजी महाराज का जीवन चरित्र, पृ. 02
3. राजस्थान के संत कवियों के दर्शन एवं लोकधर्मिता :– डॉ. रामप्रसाद दाधीच 'प्रसाद', पृ. 79
4. वही पृ. 69
5. जम्भवाणी मूल संजीवनी व्याख्या :– डॉ. किशनराम विश्नोई, पृ. 116, सबद सं. 27
6. जाम्भोजी की सबदवाणी :–(सम्पा.) डॉ. हीरालाल माहेश्वरी, पृ. 68, सबद सं. 28
7. जाम्भोजी की सबदवाणी :–(सम्पा.) डॉ. हीरालाल माहेश्वरी, पृ. 68–69, सबद सं. 28
8. शब्दवाणी जम्भसागर :– (टीकाकार) स्वामी कृष्णानन्द आचार्य, पृ. 204, सब्द सं. 70
9. बिश्नोई धर्म प्रकाश :– स्वामी भागीरथ दास, पृ. 201, शब्द 70
10. जाम्भोजी की सबदवाणी :–(सम्पा.) डॉ. हीरालाल माहेश्वरी, पृ. 156, सबद सं. 72
11. वही, पृ. 147, सबद सं. 67
12. श्री जम्भवाणी गुटका :– (सम्पा.) डॉ. हीरालाल माहेष्वरी, पृ. 46–47, सबद सं. 25
13. वही, पृ. 134–135, सबद सं. 66
14. श्री जम्भ गीता :– स्वामी सच्चिदानन्द योगीराज, पृ. 109, सबद सं. 23
15. शब्दवाणी जम्भसागर :– (सम्पा.) कृष्णानन्द आचार्य, पृ. 43, सब्द सं. 11
16. वही, पृ. 41, सबद सं. 9
17. जम्भवाणी मूल संजीवनी व्याख्या :– डॉ. किशनराम विश्नोई, पृ. 280, सब्द सं. 72
18. श्री जम्भवाणी गुटका :– (सम्पा.) डॉ. हीरालाल माहेष्वरी, सबद सं. 40
19. वही, सबद सं. 113
20. वही, सबद सं. 47 (जोग तणी थे खबरि न पाई, कांय तज्या घर बारूं)
21. गुरु जम्भेश्वर विविध आयाम :– डॉ. किशनाराम बिश्नोई, पृ. 75
22. शब्दवाणी जम्भसागर :– (टीकाकार) स्वामी कृष्णानन्द आचार्य, पृ. 131, सब्द सं. 50
23. जाम्भोजी की सबदवाणी :–(सम्पा.) डॉ. हीरालाल माहेश्वरी, सबद सं. 21
24. वही, सबद सं. 21
25. शब्दवाणी जम्भसागर :– (टीकाकार) स्वामी कृष्णानन्द आचार्य, सबद सं. 76
26. वही, सबद सं. 20
27. श्री जम्भवाणी गुटका :– (सम्पा.) डॉ. हीरालाल माहेष्वरी, पृ. 46–47, सबद सं. 25

28. वही, सबद सं. 54
29. शब्दवाणी जम्भसागर :– (टीकाकार) स्वामी कृष्णानन्द आचार्य, पृ. 211, सब्द सं. 73